अप्रैल २०११ का प्रथम पाक्षिक निवेदन-

सांसारिक कामनाओं पर नियन्त्रण कैसे हो?

(जीवन-विज्ञान के छठे संस्करण का मानचित्र सं० २ ''भाव के अनुसार गति'' सामने रखें) पंक्ति संख्या

१. भगवत्प्राप्ति के लक्ष्य पर दृष्टि स्थिर हो जाने पर आवश्यक सांसारिक भोगों की प्राप्ति के लिये अलग से कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता। यथा -

"जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं।।
तिमि सुख संपति बिनहिं बुलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ।।"

अर्थात् *"जैसे नदियाँ समुद्र में जाती हैं, यद्यपि समुद्र को नदी की कामना नहीं होती, वैसे ही सुख और सम्पत्ति बिना ही बुलाये स्वाभाविक ही धर्मात्मा पुरुष के पास जाती हैं।"* (बालकाण्ड दो. २९४, चौ. १-२)। ५

२. धन-सम्पत्ति, मान-सम्मान एवं दाम्पत्य-सुख के भोगों की प्राप्ति कर्तव्यपालन के लिये कुछ सीमा तक सुविधाजनक होती है। किन्तु उनमें महत्त्व-बुद्धि अथवा सुख-बुद्धि केवल अज्ञान के कारण होती है। उदाहरणार्थ, एक जूता पैरों से चलने के लिये उपयोगी एवं सुविधाजनक होता है। किन्तु १०
उसे सुख अथवा महत्त्व का साधन समझने से तो बहुत कीमती या आकर्षक जूता खरीदने का मन करेगा, भले ही उसकी उपयोगिता उतनी न हो। इस आधार पर निर्णय लेना कौन सी बुद्धिमानी है? **अतः इन भोगों को न तो चाहना है और अपने आप मिलने पर उन्हें त्यागना भी नहीं है। त्यागना है उनसे सुखी होने का मिथ्याभास। त्यागना है उनका अभिमान और उनकी महिमा का भाव।** उनके मिलने पर भगवत्प्राप्ति के लक्ष्य में उनका यथावश्यक उपयोग सुखपूर्वक करना है। १५
उनसे प्रेरित होकर उनकी प्राप्ति के लिए चेष्टा करना नरक का खुला द्वार है (गीता १६/२१)।

३. यह विचार हर समय रहना चाहिये कि जीवात्मा होने के कारण मनुष्य का स्वरूप परमात्मा से भिन्न नहीं है। जीवात्मा परमात्मा का ही अंश है (गीता १५/७)। वह स्वरूप स्वाभाविक ही नित्य, चेतन, अविनाशी एवं सुख का पुञ्ज ही है। नित्य होने के कारण संसार के किसी अन्य पदार्थ की प्राप्ति में सुख का भाव होना जीवात्मा का महान् भ्रम है। मानचित्र सं०२ के अनुसार, 'मुझे सुख मिले' २०
- यह भाव पशु भाव है। इससे प्रेरित होकर स्वार्थ साधन के लिये पाप होते हैं। दूसरों को पीड़ा देना, परावलम्बन, हिंसा, कपट आदि का आचरण करना आवश्यक हो जाता है और जीवात्मा को मरणोपरान्त पशु-पक्षी आदि तिर्यक योनियों की प्राप्ति होती है तथा नरक की भीषण यन्त्रणा अनन्त काल तक सहन करनी पड़ती है।

४. जैसा कि मार्च मास के प्रथम निवेदन में लिखा जा चुका है, इसके विपरीत सर्वशक्तिमान, २५
सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ एवं सर्वसुहृद परमात्मा से एकात्म होने में मनुष्य मात्र का पूरा अधिकार है। सत्संग तथा स्वाध्याय से परमात्मा के ज्ञान की छोटी से छोटी झलक भी यदि मिल जाये तो उन कामनाओं की पूर्ति में मिथ्या सुखाभास का त्याग स्वयं इस प्रकार हो जाता है, जैसे मल-मूत्र का स्वाभाविक त्याग।

३०